

राष्ट्रभाषा और प्रादेशिक भाषाएं

Rashtrabhasha Aur Pradeshik Bhashaye

‘राष्ट्र’ शब्द एक भाववाचक संज्ञा है, जो व्यापक ही नहीं भावभूमि भी रखती है। राष्ट्र एक ऐसी कड़ी या अमूर्त सत्ता को कहा जाता है कि जो प्रत्येक स्तर पर आंतरिक रूप से संबद्ध एवं एक हुआ करती है। यह एकता भाषा के स्तर पर भी होना, राष्ट्र की स्वतंत्र सत्ता की पहली शर्त है क्योंकि भाषा ही वह सर्वसुलभ माध्यम होता है, जिसके द्वारा किसी भू-भाग पर रहने वाले लोग विचारों के साथ-साथ अच्छी परंपराओं, रीतियों-नीतियों, सभ्यता संस्कृति की धरोहरों का भी आदान-प्रदान किया करते हैं। इसी दृष्टि या इन्हीं तथ्यों के आलोक में किसी स्वतंत्र देश और राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्र-भाषा होना परामवश्यक हुआ करती है। एक राष्ट्रभाषा होने का यह अर्थ कदापि नहीं हुआ करता कि उसके कारण अन्य प्रांतीय भाषाओं या स्थानीय बोलियों का विकास अवरुद्ध हो जाए। हमारे विचार में तो पारस्परिक सहयोग एवं आदान-प्रदान में वे और भी विकसित, युग के बदलते मूल्यों के अनुरूप और भी सक्षम हुआ करती है। अतः जब कोई व्यक्ति राष्ट्रीय स्वाभिमान से भरकर राष्ट्रभाषा बनाने और लागू करे की बात करता है, तब उसका यह अर्थ कदापि नहीं होता कि वह प्रांतीय भाषाओं की बोलियों का विरोध अथवा उपेक्षा की बात कर रहा है। उसका अर्थ केवल इतना ही होता है कि विदेशी भाषाओं के स्थान पर हमारी अपनी राष्ट्रभाषा को राष्ट्रीय स्तर पर और प्रादेशिक भाषाओं को अपने-अपने सीमा प्रदेशों में उचित स्थान और महत्व मिलना चाहिए। विदेशी भाषा का बहिष्कार करके ही राष्ट्रभाषा और उसके साथ-साथ प्रांतीय भाषाओं का भी समुचित विकास संभव हुआ करता है, यह एक सर्वमान्य सत्य है।

स्वतंत्र भारत के संविधान में हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया गया है। शेष पंद्रह प्रांतीय भाषाओं की भी संविधान में सम्मानपूर्वक चर्चा की गई है। इस बात की गारंटी या आश्वासन भी दिया गया है कि राष्ट्रभाषा के साथ-साथ उन सभी स्वीकृत प्रांतीय भाषाओं के उचित विकास का प्रयत्न किया जाएगा। विकास के लिए सभी प्रकार के संसाधन और अवसर जुटाए जाएंगे। यदि हम संविधान-सम्मत इन बातों के अनुसार आचरण करने लग जाएं, तो कोई कारण नहीं कि राष्ट्रभाषा और प्रांतीय भाषाओं का उचित विकास संभव न हो पाए। पर हमारी नियति, हमारा दुर्भाग्य यह है कि हम आज भी एक विदेशी भाषा के उस कंकाल को गले से लिपटाए फिरते हैं कि जिसे भाषाई दृष्टि से असमृद्ध, नवस्वतंत्रता प्राप्त देशों ने भी स्वतंत्र होने के तत्काल बाद ही दफना दिया है।

हमारी संविधान-स्वीकृत राष्ट्रभाषा की परंपराएं तो समृद्ध एवं प्रत्येक स्तर पर समर्थ हैं ही, अनेक प्रांतीय भाषाएं भी अत्यंत समृद्ध और गौरवशाली साहित्यिक परंपराओं वाली हैं। तमिल हो या कन्नड़, बंगला हो या तेलुगु, मराठी आदि कोई भी क्यों न हो, एक विदेशी भाषा के जूए तले दबे-घुटे रहने के कारण न केवल राष्ट्रभाषा, बल्कि इन सबके विकास का मार्ग भी प्रायः अवरुद्ध हो गया है। यदि ये सब भाषाएं जीवित हैं तो अपनी भीतरी ऊर्जा के कारण न कि हम स्वतंत्र भारत के निवासियों के मानसिक या फिर बौद्धिक स्तर पर, परतंत्र नागरिकों के व्यवहार और परतंत्र मानसिकता के कारण।

आज की परिस्थितियों में राष्ट्रभाषा हो या प्रांतीय भाषा, भाषाओं के अध्ययन का संबंधित प्रत्यक्षतः हमारी रोजी-रोटी की समस्या के साथ भी जुड़ा हुआ है। आज वह हमें राष्ट्रभाषा या प्रांतीय भाषा पढ़कर नहीं मिल सकती। हद तो यह है कि ये सब अपनी भाषाएं अपने ही देश-घर में हमें सामान्य सम्मान और गौरव का भाव नहीं दे पातीं। वह सब मिलता है उस विदेशी भाषा से कि जिसने पहले हमें राजनीतिक-आर्थिक स्तर पर पराधीन बना रखा था, आज मानसिक एवं भावनात्मक स्तर पर अभाव जगाकर पराधीन बना रखा है। फिर राष्ट्रभाषा और प्रांतीय भाषाओं का उचित विकास हो भी, तो कैसे? स्पष्ट है कि अपनी मानसिकता को बदले बिना वह कदापि संभव नहीं हो सकता।

राष्ट्रभाषा का स्थान और महत्व बड़ी बहन के समान माना जाता है। सभी प्रांतीय भाषाएं उसकी छोटी सगी बहनें हैं। फिर प्रायः सभी या अधिकांश का मूल स्रोत भी एक है। सभी बोलने, समझने वालों की आत्मा एक है, विचार और जीवन-दर्शन एक हैं, महान परंपराएं एक हैं फिर अलगाव कैसा? वस्तुतः अलगाव का भाव उन निहित-स्वार्थियों द्वारा जगाया गया है, जिनकी राजनीति की रोटियां अलगाव की आग पर ही सिकती हैं। हमें यह बात अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए कि राष्ट्रभाषा और प्रांतीय भाषाएं सभी हमारी अपनी हैं। सभी की उन्नति अन्योन्याश्रित है। सबकी राह की मुख्य बाधा वे स्वयं नहीं, बल्कि अंग्रेजी के प्रति अंधा मोह एवं लगाव है। इस मोह और लगाव से छुटकारा पाकर ही राष्ट्रभाषा सहित सभी भाषाओं का विकास एवं हित-साधन संभव हो सकता है। अन्य कोई उपाय नहीं। जितनी जल्दी हम विदेशी भाषा की मानसिक पराधिनता से छुटकारा पा लेंगे, उतनी ही जल्दी हमारी राष्ट्रभाषा एवं प्रांतीय भाषाओं की उन्नति संभव हो सकेगी। अन्य कोई उपाय नहीं।